के. वी. रामी रेड्डी

बनाम

प्रेमा

(2001 की दीवानी अपील सं. 2551)

20 फरवरी, 2008

[डॉ.अरिजीत पसायत और पी. सथासिवम, न्यायमूर्तिगण]

दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 - आदेश XX नियम 1 एवं 3 तथा धारा 2(9) - प्रदत्त निर्णय की वैधता - विचारण न्यायाधीश द्वारा अपना निर्णय सुनाने तथा वाद-दावे को डिक्री करने से पूर्व निर्णय को पूर्ण न किया जाना - उच्च न्यायालय द्वारा इसे विधि की दृष्टि में निर्णय न मानते हुए अपास्त किया गया - धारित : हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं - किसी न्यायाधीश द्वारा यह घोषित करना कि उसका निर्णय क्या होने वाला है अथवा अंतिम परिणाम में क्या समाविष्ट होगा, तब तक निर्णय नहीं है जब तक कि उसने अपने आशय को औपचारिक रूप न दे दिया हो तथा उसे खुले न्यायालय में अपने मस्तिष्क की अंतिम अभिव्यक्ति के रूप में उच्चारित न कर दिया हो - निर्णय/आदेश।

शब्द एवं वाक्यांश - 'निर्णय' - उसका अर्थ – दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 के संदर्भ में।

उत्तरदाता ने विशिष्ट पालन हेतु वाद दायर किया। उत्तरदाता के अनुसार, दिनांक 24.3.1999 को असैनिक न्यायधीश ने निर्णय को आशुलिपिक को लिखवाए बिना, उसका टंकण एवं हस्ताक्षर किए बिना, केवल वादपत्र की डॉकेट शीट पर यह टिप्पणी अंकित कर दी कि उत्तरदाता दावा की गई राहत का अधिकारी नहीं है तथा प्रचालक भाग दिनांक 25.03.1999 को मध्याह्न अवकाश के दौरान लिखवाया गया। उत्तरदाता ने असैनिक

न्यायधीश द्वारा निर्णय उच्चारित करते समय की गई अनियमितताओं को रेखांकित करते हुए पुनरीक्षण याचिका दायर की। अपीलकर्ता ने यह तर्क दिया कि संपूर्ण निर्णय न्यायाधीश द्वारा लिखवाया जा चुका था और टंकित भाग में महत्वपूर्ण मुद्दे 1 से 3 सम्मिलित थे तथा आशुलिपिक चौथे मुद्दे एवं अतिरिक्त मुद्दे के मध्य तक पहुँच चुका था; और यह कि एक युक्तियुक्त निष्कर्ष निकाला जा सकता था कि सभी मुद्दे आशुलिपिक को लिखवाए जा चुके थे तथा जिस तिथि को निर्णय उच्चारित किया गया अर्थात् 24.03.1999 को, निर्णय पूर्ण माना जाना चाहिए था। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने धारित किया कि चूँकि असैनिक न्यायाधीश ने अपना निर्णय सुनाने से पूर्व निर्णय को पूर्ण नहीं किया था, अतः वह विधि की दृष्टि में निर्णय नहीं था। दिनांक 24.03.1999 का निर्णय अपास्त कर दिया गया तथा वाद को असैनिक न्यायाधीश के पास पुनः तर्क सुनने एवं निर्णय प्रदान करने हेतु प्रत्यावर्तित कर दिया गया। अतः वर्तमान अपील।

अपील खारिज करते हुए, न्यायालय ने धारित किया :-

अभिनिर्धारित : 1.1 इस प्रश्न के संबंध में कि क्या निर्णय विधिपूर्वक प्रदान किया गया है, यदि यह मात्र एक प्रक्रियात्मक अनियमितता है और संबंधित न्यायाधीश ने निर्णय पर हस्ताक्षर नहीं किए थे, तब इस प्रकार प्रदत्त निर्णय को अविधिमान्य नहीं किया जा सकता। आदेश XX नियम 1 दीवानी प्रक्रिया संहिता यह उपबंधित करता है कि वाद की सुनवाई हो जाने के पश्चात्, उस पर सुनवाई करने वाला न्यायालय, जहाँ यह अनुमेय हो, आशुलिपिक को लिखवाकर खुले न्यायालय में निर्णय उच्चारित करेगा। उस पर वही तिथि अंकित होती है जिस दिन वह उच्चारित किया जाता है। निर्णय की तिथि को उस तिथि के कारण कभी परिवर्तित नहीं किया जाता जिस दिन पश्चातवर्ती रूप से हस्ताक्षर किए गए हों। मात्र इस तथ्य से कि विद्वान न्यायाधीश द्वारा पहले से लिखवाए गए निर्णय का एक बड़ा

भाग लिखवा दिया गया था, अपने आप में यह निष्कर्ष नहीं निकलेगा कि निर्णय प्रदान कर दिया गया था। [कंडिका 9] [87-G; 88-A, B]

1.2 किसी न्यायाधीश द्वारा यह घोषणा कि उसका 'निर्णय' क्या होने वाला है, अथवा उसके अंतिम परिणाम में क्या समाविष्ट होने वाला है, तब तक निर्णय नहीं है जब तक कि उसने अपने आशय को औपचारिक रूप न दे दिया हो तथा उसे खुले न्यायालय में अपने मस्तिष्क की अंतिम अभिव्यक्ति के रूप में उच्चारित न कर दिया हो। [कंडिका 11] [89-सी, डी]

1.3 दीवानी प्रक्रिया संहिता की धारा 2(9) 'निर्णय' को ऐसी कथन के रूप में परिभाषित करती है जो न्यायाधीश द्वारा डिक्री अथवा आदेश के आधारों के संबंध में दिया गया हो। दीवानी प्रक्रिया संहिता किसी वाद का मौखिक निर्णय द्वारा निपटारा करने के पश्चात् निर्णय लिखे जाने की परिकल्पना नहीं करती और ऐसा नहीं किया जाना चाहिए तथा यह लोकनीति के प्रतिकूल होगा कि केवल साक्ष्य के आधार पर यह निर्धारित किया जाए कि न्यायालय का 'निर्णय' क्या था, जहाँ अंतिम परिणाम मौखिक रूप से घोषित कर दिया गया हो किन्तु 'निर्णय', जैसा कि दीवानी प्रक्रिया संहिता में परिभाषित है, जिसमें वाद का संक्षिप्त कथन, निर्धारण के बिंदु, उन पर निर्णय तथा ऐसे निर्णय के कारण समाविष्ट हों, पश्चातवर्ती रूप से अंतिम रूप दिया गया हो। [कंडिका 12 एवं 13] [89-डी, ई, एफ]

1.4 निर्विवाद रूप से, विचारण न्यायाधीश ने अपना निर्णय सुनाने से पूर्व निर्णय को पूर्ण नहीं किया था। ऐसी स्थिति में, आक्षेपित निर्णय में ऐसी कोई त्रुटि नहीं है जो हस्तक्षेप को अपेक्षित करे। यह निर्देशित किया जाता है कि विचारण न्यायालय पुनः तर्क सुनेगा। [कंडिका 15] [90-सी, डी]

श्रीमती स्वरण लता घोष बनाम हरेंद्र कुमार बनर्जी एवं अन्य, **ए.आई.आर. 1969 एस.सी. 1167;** बलराज तनेजा एवं अन्य बनाम सुनील मदान एवं अन्य, **1999 (8) एस.सी.सी. 396 - अवलंबित।**

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : दीवानी अपील संख्या 2551/2001

मद्रास के उच्च न्यायालय द्वारा सी.आर.पी. संख्या 1909/1999 में दिनांक 29/2/2000 को पारित अंतिम निर्णय एवं आदेश से।

वी.बालाचंद्रन, अपीलकर्ता की ओर से।

वी. रामासुब्रमणियन, उत्तरदाता की ओर से।

न्यायालय का निम्नलिखित निर्णय प्रदान किया गया

डॉ. अरिजित पसायत, न्यायमूर्ति 1. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया।

2. इस अपील में चुनौती मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के उस निर्णय को दी गई है, जिसके द्वारा ओ.एस. संख्या 584/1996 में निर्णय उच्चारित करते समय विद्वान सप्तम सहायक नगर असैनिक न्यायाधीश, चेन्नई द्वारा की गई अनियमितताओं को रेखांकित करते हुए दायर दीवानी पुनरीक्षण याचिका को स्वीकार किया गया। वाद में विवाद का विस्तृत उल्लेख आवश्यक नहीं है, क्योंकि वर्तमान अपील में विवादित प्रश्न अत्यंत संकीर्ण परिधि के भीतर हैं।

3. वर्तमान उत्तरदाता द्वारा विक्रय अनुबंध दिनांक 20.10.1988 को प्रवर्तित कराने हेतु विशिष्ट पालन के लिए वाद दायर किया गया था। कहा जाता है कि वाद का निर्णय दिनांक 24.03.1999 को किया गया। वर्तमान उत्तरदाता, जो दीवानी पुनरीक्षण याचिका में याचिकाकर्ता था, के अनुसार, निर्णय को आशुलिपिक को लिखवाए बिना, उसका टंकण एवं हस्ताक्षर किए बिना, केवल वादपत्र की डॉकेट शीट पर यह टिप्पणी कर दी गई कि वाद में

वादी विक्रय अनुबंध को प्रवर्तित कराने हेतु विशिष्ट पालन की राहत का अधिकारी नहीं है, किन्तु वह ₹2,00,000/- की वापसी का अधिकारी है। पुनरीक्षण याचिका में यह अभिकथन किया गया था कि विधि की दृष्टि में कोई निर्णय अस्तित्व में नहीं था। यह इंगित किया गया कि केवल प्रचालक भाग दिनांक 25.03.1999 को मध्याह्न अवकाश के दौरान लिखवाया गया था और, इसलिए, दिनांक 24.03.1999 को दिया गया निर्णय विधि की दृष्टि में अस्तित्वहीन एवं शून्य था। दीवानी पुनरीक्षण याचिका में उत्तरदाता अर्थात् वर्तमान अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह रुख अपनाया कि चार मुद्दे तथा एक अतिरिक्त मुद्दा निर्मित किए गए थे। संपूर्ण निर्णय विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा लिखवाया जा चुका था तथा टंकित भाग में महत्वपूर्ण मुद्दे 1 से 3 सम्मिलित थे और आशुलिपिक चौथे मुद्दे तथा अतिरिक्त मुद्दे के मध्य तक पहुँच चुका था। अतः यह निवेदित किया गया कि एक युक्तियुक्त निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए कि सभी मुद्दे आशुलिपिक को लिखवाए जा चुके थे और जिस तिथि को निर्णय उच्चारित किया गया, अर्थात् 24.03.1999 को, निर्णय पूर्ण माना जाना चाहिए था। विद्वान एकल न्यायाधीश ने वर्तमान अपीलकर्ता द्वारा लिए गए रुख में कोई सार नहीं पाया। यह अभिनिर्धारित किया गया कि चूँकि विद्वान विचारण न्यायाधीश ने अपना निर्णय सुनाने से पूर्व निर्णय को पूर्ण नहीं किया था, इसलिए यह धारित किया जाना चाहिए कि विधि की दृष्टि में कोई निर्णय अस्तित्व में नहीं था। तदनुसार, दीवानी पुनरीक्षण याचिका स्वीकार की गई और दिनांक 24.03.1999 का निर्णय अपास्त कर दिया गया तथा वाद को वर्तमान सप्तम सहायक नगर असैनिक न्यायाधीश, चेन्नई को प्रत्यावर्तित कर दिया गया, जिन्हें पुनः तर्क सुनकर निर्णय प्रदान करना था।

4. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदित किया कि विद्वान नगर असैनिक न्यायाधीश द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया, दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में 'दीवानी प्रक्रिया संहिता') के आदेश XX, नियम 5 की पृष्ठभूमि में विधि द्वारा अनुमेय है।

5. दूसरी ओर, उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदित किया कि विचारण न्यायाधीश ने वाद का निर्णय आदेश XX, नियम 5, दीवानी प्रक्रिया संहिता की पृष्ठभूमि में नहीं किया। इसके विपरीत, आदेश XX, नियम 1 एवं 3, दीवानी प्रक्रिया संहिता के उपबंध वाद के तथ्यों पर लागू होते हैं।

6. आदेश XX, नियम 1(1), दीवानी प्रक्रिया संहिता (मद्रास संशोधन) इस प्रकार है :-

"(1) वाद की सुनवाई हो जाने के पश्चात् न्यायालय खुले न्यायालय में निर्णय उच्चारित करेगा, या तो तत्काल अथवा किसी भावी तिथि को, जिसकी समुचित सूचना पक्षकारों अथवा उनके अधिवक्ताओं को दी जाएगी।

(2) निर्णय खुले न्यायालय में आशुलिपिक को लिखवाकर उच्चारित किया जा सकता है, जहाँ पीठासीन न्यायाधीश को इस निमित्त उच्च न्यायालय द्वारा विशेष रूप से सशक्त किया गया हो।"

इसी प्रकार, आदेश XX, नियम 3 इस प्रकार है :-

"निर्णय पर न्यायाधीश द्वारा खुले न्यायालय में, उसे उच्चारित करते समय, तिथि अंकित की जाएगी तथा हस्ताक्षर किए जाएँगे और एक बार हस्ताक्षर किए जाने के पश्चात्, धारा 152 में उपबंधित अथवा पुनर्विलोकन की दशा को छोड़कर, उसमें तत्पश्चात् कोई परिवर्तन अथवा परिवर्धन नहीं किया जाएगा।"

7. आदेश XX, नियम 5, जिस पर अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा अत्यधिक बल दिया गया, यह कहता है कि जिन वादों में मुद्दे निर्मित किए गए हों, उनमें न्यायालय प्रत्येक पृथक मुद्दे पर अपने निष्कर्ष अथवा निर्णय तथा उसके कारण अभिलिखित करेगा, जब तक कि किसी एक अथवा अधिक मुद्दों पर निष्कर्ष वाद के निर्णय हेतु पर्याप्त न हो।

8. जैसा कि उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा सही रूप से निवेदित किया गया, यह वह दृष्टिकोण नहीं था जिसे विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा व्यक्त किया गया था।

9. अंतिम प्रश्न यह है कि क्या वर्तमान वाद में निर्णय विधिपूर्वक प्रदान किया गया है? यदि यह मात्र एक प्रक्रियात्मक अनियमितता है और संबंधित न्यायाधीश ने निर्णय पर हस्ताक्षर नहीं किए थे, तब इस प्रकार प्रदत्त निर्णय को अविधिमान्य नहीं किया जा सकता। आदेश XX नियम 1, दीवानी प्रक्रिया संहिता यह उपबंधित करता है कि वाद की सुनवाई हो जाने के पश्चात्, उस पर सुनवाई करने वाला न्यायालय, जहाँ यह अनुमेय हो, आशुलिपिक को लिखवाकर खुले न्यायालय में निर्णय उच्चारित करेगा। उस पर वही तिथि अंकित होती है जिस दिन वह उच्चारित किया जाता है। निर्णय की तिथि को उस तिथि के कारण कभी परिवर्तित नहीं किया जाता जिस दिन पश्चातवर्ती रूप से हस्ताक्षर किए गए हों। मात्र इस तथ्य से कि विद्वान न्यायाधीश द्वारा पहले से लिखवाए गए निर्णय का एक बड़ा भाग लिखवा दिया गया था, अपने आप में यह निष्कर्ष नहीं निकलेगा कि निर्णय प्रदान कर दिया गया था।

10. श्रीमती स्वरण लता घोष बनाम हरेंद्र कुमार बनर्जी एवं अन्य (ए.आई.आर. 1969 एस.सी. 1167) में, अन्य बातों के साथ-साथ, निम्नलिखित धारित किया गया :- (कंडिका 6 में) :

> "न्यायालय में किसी दीवानी विवाद का विचारण, विधि तथा न्यायालय की प्रक्रिया के अनुसार, विवादित पक्षकारों के मध्य विवादित विषय का न्यायिक निर्धारण करने के उद्देश्य से किया जाता है। विवाद में हितबद्ध पक्षकारों को विधि तथा तथ्य के प्रश्नों पर अपने-अपने मामले प्रस्तुत करने का अवसर, पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य के माध्यम से तथ्यों का अभिनिर्धारण तथा विवादित तथ्यों पर निष्कर्ष एवं अभिनिर्धारित तथ्यों पर विधि के अनुप्रयोग के आधार पर कारणयुक्त निर्णय द्वारा विवाद का अधिनिर्णयन,

न्यायिक विचारण के अनिवार्य गुण हैं। "किसी न्यायिक विचारण में, न्यायाधीश को न केवल ऐसे निष्कर्ष पर पहुँचना चाहिए जिसे वह न्यायसंगत मानता हो, बल्कि जब तक न्यायालय की प्रथा अथवा विधि द्वारा अन्यथा अनुमत न हो, उसे विवाद से उसके समाधान तक पहुँचने वाली अंतिम मानसिक प्रक्रिया को भी अभिलिखित करना चाहिए। जहाँ विधि अथवा तथ्य के महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न होते हों, वहाँ किसी विवादित दावे का न्यायिक निर्धारण तभी संतोषजनक रूप से किया हुआ माना जाता है जब वह उन अत्यंत सशक्त कारणों द्वारा समर्थित हो जो न्यायाधीश को उपयुक्त प्रतीत हों; केवल विवादित विषय का निर्णय करने वाला, कारणों से असमर्थित आदेश, कोई निर्णय ही नहीं है। किसी विवादित दावे के निर्णय के समर्थन में कारणों का अभिलेखन एक से अधिक उद्देश्यों की पूर्ति करता है। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि निर्णय मनमानी अथवा कल्पना का परिणाम न होकर विवादित विषय के प्रति न्यायिक दृष्टिकोण का परिणाम हो; इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना भी है कि विषय का अधिनिर्णयन विधि तथा विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार किया गया है। विवाद का कोई पक्षकार सामान्यतः यह जानने का अधिकारी होता है कि न्यायालय ने उसके विरुद्ध निर्णय किन आधारों पर किया है और विशेष रूप से तब, जब निर्णय अपील के अधीन हो। तब अपीलीय न्यायालय के पास पर्याप्त सामग्री उपलब्ध होगी, जिसके आधार पर वह यह निर्धारित कर सके कि तथ्यों का समुचित रूप से अभिनिर्धारण किया गया है या नहीं, विधि का सही अनुप्रयोग किया गया है या नहीं तथा परिणामी निर्णय न्यायसंगत है या नहीं। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि विद्वान विचारण न्यायाधीश ने अपने निष्कर्ष के समर्थन में कोई कारण अभिलिखित नहीं किया और उच्च न्यायालय ने अपील में केवल यह अभिलिखित किया कि उनके विचार में वादी ने वाद में अपने मामले को पर्याप्त रूप से सिद्ध कर दिया था।

11. किसी न्यायाधीश द्वारा यह घोषणा कि उसका 'निर्णय' क्या होने वाला है, अथवा उसके अंतिम परिणाम में क्या समाविष्ट होने वाला है, तब तक निर्णय नहीं है जब तक कि उसने अपने आशय को औपचारिक रूप न दे दिया हो तथा उसे खुले न्यायालय में अपने मस्तिष्क की अंतिम अभिव्यक्ति के रूप में उच्चारित न कर दिया हो।

12. "दीवानी प्रक्रिया संहिता किसी वाद का मौखिक निर्णय द्वारा निपटारा करने के पश्चात् निर्णय लिखे जाने की परिकल्पना नहीं करती और ऐसा नहीं किया जाना चाहिए तथा यह लोकनीति के प्रतिकूल होगा कि केवल साक्ष्य के आधार पर यह निर्धारित किया जाए कि न्यायालय का 'निर्णय' क्या था, जहाँ अंतिम परिणाम मौखिक रूप से घोषित कर दिया गया हो किन्तु 'निर्णय', जैसा कि दीवानी प्रक्रिया संहिता में परिभाषित है, जिसमें वाद का संक्षिप्त कथन, निर्धारण के बिंदु, उन पर निर्णय तथा ऐसे निर्णय के कारण समाविष्ट हों, पश्चातवर्ती रूप से अंतिम रूप दिया गया हो।"

13. "दीवानी प्रक्रिया संहिता की धारा 2(9) 'निर्णय' को ऐसी कथन के रूप में परिभाषित करती है जो न्यायाधीश द्वारा डिक्री अथवा आदेश के आधारों के संबंध में दिया गया हो।"

14. (*बलराज तनेजा एवं अन्य बनाम सुनील मदान एवं अन्य, 1999 (8) एस.सी.सी. 396)* में, अन्य बातों के साथ-साथ, निम्नलिखित धारित किया गया :-

"इस वाद में एक और त्रुटि है, जो विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित तथा खंडपीठ द्वारा अनुमोदित 'निर्णय' से संबंधित है।"

"निर्णय" जैसा कि दीवानी प्रक्रिया संहिता की धारा 2(9) में परिभाषित है, न्यायाधीश द्वारा डिक्री अथवा आदेश के आधारों के संबंध में दिए गए कथन को अभिप्रेत करता है। निर्णय में क्या समाविष्ट होना चाहिए, यह आदेश 20 नियम 4(2) में इंगित किया गया है, जो कहता है कि निर्णय में 'वाद का संक्षिप्त कथन, निर्धारण के बिंदु, उन पर

निर्णय तथा ऐसे निर्णय के कारण' समाविष्ट होंगे। यह एक स्वावलंबी दस्तावेज होना चाहिए, जिससे यह प्रकट हो कि वाद के तथ्य क्या थे और वह विवाद क्या था जिसका न्यायालय द्वारा निपटारा किया जाना था तथा किस प्रकार किया गया। वह तर्क-प्रक्रिया, जिसके द्वारा न्यायालय अंतिम निष्कर्ष पर पहुँचा और वाद का डिक्रीकरण किया, निर्णय में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होनी चाहिए।"

15. निर्विवाद रूप से, विचारण न्यायाधीश ने अपना निर्णय सुनाने से पूर्व निर्णय को पूर्ण नहीं किया था। ऐसी स्थिति में, आक्षेपित निर्णय में ऐसी कोई त्रुटि नहीं है जो हस्तक्षेप को अपेक्षित करे। उच्च न्यायालय ने केवल पुनः तर्क सुनने का निर्देश दिया है। अपील खारिज करते हुए, हम निर्देश देते हैं कि तर्क पुनः सुने जाएँ और विचारण न्यायालय यथाशीघ्र, अधिमानतः आज से तीन माह के भीतर, अपना निर्णय प्रदान करे। अनावश्यक विलंब से बचने हेतु, पक्षकारों को दिनांक 05.03.2008 को विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने दिया जाए, ताकि तर्क हेतु तिथि नियत की जा सके।

याचिका खारिज कर दी गई।

एन. जे.

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।